रचनात्मक विवाद द्वारा सीखना

अमन मदान

ऐसी संस्कृति का निर्माण कैसे हो जहाँ व्यक्ति अपनी ग़लतियों पर दूसरों की टिप्पणियाँ सुन सकें। हम अपनी टिप्पणियाँ कैसे दें कि ग़लती करने वाला अपनी ग़लतियों के बारे में सोचे, और उनको ठीक करने की कोशिश भी करे। लेख कहता है यह संस्कृति निर्मित करने की बात है। इस लेख में इन प्रश्नों पर चर्चा है कि इस संस्कृति के मायने क्या हैं, और स्कूलों में इस तरह की संस्कृति कैसे विकसित हो सकती है। लेख पढ़ने के दौरान यह प्रश्न भी दिमाग़ में आ सकता है कि क्या ऐसी संस्कृति निर्मित हो भी सकती है, पर दिए गए उदाहरण दिखाते हैं कि ऐसे प्रयास किए जा सकते हैं। काफ़ी धैर्य और समय की ज़रूरत होगी, लेकिन यह सम्भव है। -सं.

सुरेश एक मेहनती और ईमानदार गणित का शिक्षक था। एक दिन उसके साथ में पढ़ाने वाली शिक्षिका समीना उसके पास आई और कहा, "तुम अपने बच्चों को भाग करना सिखा रहे थे, मगर उन्हें कुछ समझ नहीं आया। वे अभी भी भाग नहीं कर सकते।" सुरेश को बहुत बुरा लगा। उसकी समझ से बच्चों को सब समझ आ रहा था। फिर समीना ऐसा कैसे कह सकती है। क्या उसे समीना की कही अनसुनी कर देनी चाहिए; या उसे कुछ और करना चाहिए?

अकसर कोई-न-कोई हमसे ऐसी बात करता है जो हमारी समझ से बिलकुल उलट होती है। हमें लगता है कि यूँ किया जाना चाहिए, और उन्हें लगता है कि कुछ और ही किया जाना चाहिए। जब लोग हमसे सहमत होते हैं तो अच्छा लगता है। हमें यह सुनना अच्छा नहीं लगता कि हम ग़लत हैं। ऐसा सुनने से लगता है कि दूसरों के सामने हमें बेइज़्ज़त किया गया है। हमारा आत्म-सम्मान आहत होता है। लेकिन अगर हम वाक़ई में थोड़े से ग़लत थे, तो फिर क्या? अगर सुरेश के छात्रों को सच में भाग करना नहीं आया था? अगर सुरेश को सिर्फ़ यह प्रतीत हुआ कि वे सीख गए, मगर उनमें से अधिकांश को नहीं आया था? ऐसे में, वह समीना की बातों पर ध्यान न देकर अपने छात्रों के साथ बहुत अन्याय कर देगा। अगर सुरेश अपने छात्रों का भला चाहता है तो उसे समीना की बातों पर ध्यान देते हुए छात्रों की भाग करने की क्षमता को जाँच

चित्र : अबीरा बंदोपाध्याय

लेना चाहिए। फिर उसे स्पष्ट हो जाएगा कि वे सीखे थे या नहीं। हो सकता है उनमें से कुछ अभी न समझे हों। वह फिर से समझा सकता है, और बच्चों की प्रैक्टिस करवा सकता है। समीना की बातों को सुनने से सुरेश और उसके छात्रों, दोनों का भला होगा। ऐसा करने से उसकी ख़ुद की समझ, कि वह अच्छा शिक्षक है, और ज़्यादा मज़बूत होगी और उसका आत्म-सम्मान बढ़ेगा।

दूसरों के नज़रिए को समझना हम सबके लिए अच्छा होता है। फिर भी कम ही लोग ऐसा करते हैं। चाहे शिक्षक हों या छात्र, कम्पनियों के अध्यक्ष या फिर राजनेता, सभी को दूसरों के पक्ष को समझकर फ़ायदा ही होता है। जब मुझे कोई टेस्ट की तारीख़ तय करनी होती है, मैं उसे सोचकर फिर अपने छात्रों के सामने रखता हूँ। अगर वे उसका विरोध करते हैं, मैं उनके साथ मिलकर कोई और तारीख़ तय करता हूँ। यह उनके और मेरे, दोनों के लिए अच्छा है। दूसरा उदाहरण लें, क़ानून कहता है जब भी कोई बड़ी फ़ैक्टरी बननी होती है उसके मैनेजरों को स्थानीय लोगों से बात करनी होती है। तब उनकी समस्याओं और चिन्ताओं को सुनकर उन्हें फ़ैक्टरी को उस तरह से बनाना चाहिए जिसे सबकी स्वीकृति मिले। समझदारी इसी में है कि सबकी सुनें, और ऐसे काम करें कि सभी सन्तुष्ट हों। मगर फिर भी कई लोग ऐसा नहीं करते।

साझे समाधान कैसे ढूँढ़ते हैं, यह सिखाने के लिए दो भाइयों, डेविड और रॉजर जॉनसन ने 1995 में एक गतिविधि ईजाद की जिसका नाम है– रचनात्मक विवाद (constructive controversy)। यह मॉर्टन डौयेट्ष नामक सामाजिक मनोवैज्ञानिक के शोध से प्रभावित था। डौयेट्ष ने टकरावों और उनके समाधान पर कई दशक बिताए थे। शीत युद्ध के दौरान वे अमरीकी सरकार के सलाहकार भी थे, और उन्होंने अपनी सरकार को सोवियत यूनियन के नज़रिए को समझने में मदद की थी। जॉनसन बन्धुओं ने एक खेल-जैसी गतिविधि बनाई जिसे 'रचनात्मक विवाद' या फिर 'ढाँचागत विवाद' (structured controversy) भी कहते हैं। इसे बच्चे और बूढ़े, दोनों खेल सकते थे, और उससे सीख सकते थे। यह गतिविधि अब विश्व में कई स्कूलों, कॉलेजों और संस्थाओं में इस्तेमाल की जाती है। मसलों पर चर्चा करने का यह तरीक़ा डिबेट कॉम्पिटिशन से कहीं बेहतर माना जाता है। डिबेट की सबसे बड़ी दिक़्क़त यह है कि वह बच्चों को दूसरे को हराना सिखाती है। उसमें दूसरों को सुनने या उनके साथ मिलकर हल ढूँढ़ने पर ज़ोर नहीं दिया जाता। लेकिन रचनात्मक विवाद में इन्हीं बातों पर ज़ोर दिया जाता है, दूसरों के अच्छे विचारों को चुनकर अपनाना, और मिलकर आगे बढ़ना।

रचनात्मक विवाद

रचनात्मक विवाद की गतिविधि की शुरुआत में एक विवाद चुनते हैं जिसके दो पक्ष हैं। उदाहरण के लिए, इस साल स्कूल का पिकनिक कहाँ जाए– चिड़ियाघर या पास के झरने पर। इसपर चर्चा करने के लिए अगर सहभागियों को पहले मेरे पिछले लेख में बताई गईं कुशलताओं को सिखा दिया गया हो (कैसे ध्यान से सुना जाता है; और कैसे बिना आक्रामक हुए बात की जाती है?) तो काफ़ी मदद मिलेगी। मगर यह अनिवार्य नहीं है।

1. सभी भाग लेने वाले छात्रों को चार के समूहों में विभाजित किया जाता है। फिर चार सदस्यों के प्रत्येक समूह में दो सदस्यों की टीमें बनाई जाती हैं।

2. एक जोड़ी को चिड़ियाघर जाने के पक्ष में सोचने, शोध करने, और बिन्दु बनाने के लिए कहा जाता है। दूसरी जोड़ी को झरने पर जाने के पक्ष में सोचने, शोध करने, और बिन्दु बनाने के लिए कहा जाता है। वे ऐसा करने में 10-15 मिनट बिताते हैं।

3. जोड़ों को अपने-अपने तर्क प्रस्तुत करने के लिए 5 मिनट दिए जाते

हैं। जब एक जोड़ा बोल रहा होता है, दूसरे को ध्यान से सुनना होगा और नोट्स बनाने होंगे। उदाहरण के लिए, एक जोड़ा कह सकता है कि चिड़ियाघर जाना झरने पर जाने से कहीं ज़्यादा सुरक्षित है। और फिर वे झरने की तुलना में वहाँ बहुत ज़्यादा जानवर भी देखेंगे। दूसरा जोड़ा कह सकता है कि झरना प्रकृति का असली, मूल रूप है। बहते पानी का नज़ारा उस तरह का आनन्द देगा जो पिंजरों में बन्द जानवरों को देखने से कभी नहीं मिल सकता।

4. फिर प्रत्येक जोड़े को दूसरे जोड़े द्वारा बताए गए बिन्दुओं का खण्डन करने के लिए 5 मिनट दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए, एक जोड़ा कह सकता है कि झरना जल्दी ही उबाऊ हो जाता है, जबकि चिड़ियाघर बहुत अधिक दिलचस्प है। दूसरा जोड़ा कह सकता है कि चिड़ियाघर पूरी तरह नकली है, जबकि झरना असली चीज़ है, इत्यादि।

5. फिर एक बड़ी मज़ेदार बात होती है। दोनों जोड़ों को अपना स्थान आपस में बदलना होता है। उन्हें अपने पुराने बयान से थोड़ी दूरी बनाकर अब दूसरी तरफ़ से कौन-सी अच्छी दलीलें दी जा सकती हैं जो ठोस हों और जिनके बारे में सोचना चाहिए, उनको पहचानकर चिह्नित करना होता है। जैसे– जो पहले चिड़ियाघर के पक्ष में थे अब उन्हें झरने पर जाने के पक्ष में कौन-से अच्छे तर्क हो सकते हैं, उनकी सूची बनानी है। ऊपर लिखे 2, 3 और 4 बिन्दु फिर से दोहराए जाते हैं। इस तरह पक्ष को पलटना बहुत लाभकारी होता है। इससे प्रतिभागियों को दूसरों के नज़रिए पर ध्यान देने की आदत बनती है, और ऐसा करने का प्रोत्साहन मिलता है।

6. अन्त में दोनों जोड़े फिर एक ही 4 के समूह में आते हैं, और एक साझी समझ की तलाश करते हैं। इस साझी समझ में दोनों पक्षों द्वारा जो अच्छे तर्क दिए गए थे उनको शामिल किया जाता है। उदाहरण के लिए, यह स्वीकार किया जा सकता है कि चिड़ियाघर में देखने के लिए झरने से ज़्यादा जीव होंगे तो इस साल चिड़ियाघर जाया जाए, और अगले साल झरने को देखा जाएगा। या फिर यह कर सकते हैं कि झरने के लिए अगर बहुत दूर का चक्कर नहीं लग रहा तो बस में ही बैठे-बैठे उसे देख लिया जाएगा, और फिर चिड़ियाघर की तरफ़ जाया जाएगा। इस तरह के कई निष्कर्ष हो सकते हैं जो तर्क पर आधारित भी हैं, और दोनों पक्षों की इच्छाओं का सम्मान भी रखते हैं।

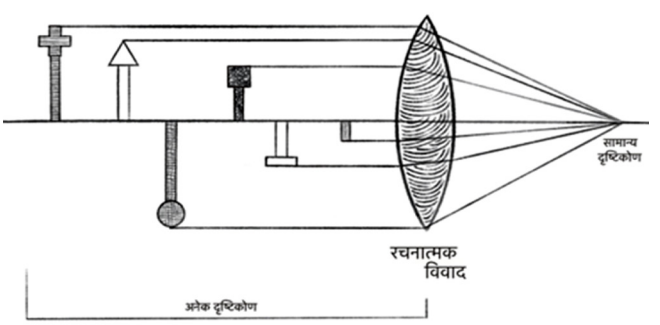

चित्र : अबीरा बंदोपाध्याय

तस्वीर जो इन चरणों को दर्शाती है—

1. चार के समूह और उनमें 2 जोड़े;
2. अच्छे तर्क ढूँढ़ना;
3. अपने तर्क सामने रखना, और दूसरों के तर्कों का खण्डन करना;
4. पक्ष और नज़रिया पलटकर सोचना; और
5. एक ऐसा नतीजा ढूँढ़ना जो सबको स्वीकृत हो।

विद्यालयों में रचनात्मक विवाद

कई शिक्षक और विद्यालय अब डिबेट की जगह रचनात्मक विवाद करवाना ज़्यादा पसन्द करते हैं। सालाना डिबेट प्रतियोगिता की जगह सालाना रचनात्मक विवाद की प्रतियोगिता करवाई जा सकती है। सबसे अच्छे तर्क और सबसे अच्छी तरह से सभी को सन्तुष्ट करने वाले उपाय ढूँढ़ने वाली टीम इसमें विजयी घोषित की जाती है। कई शिक्षक 1-2 महीनों में एक बार रचनात्मक विवाद की गतिविधि अपनी कक्षा में कराते हैं। इसमें वे मज़ेदार विवादित विषयों पर चर्चा कराते हैं। जैसे– अँग्रेज़ शासन भारत के लिए अच्छा था या बुरा; इलेक्ट्रॉन एक तरंग है या कण; इत्यादि।

कई अध्ययनों ने यह दिखाया है कि रचनात्मक विवाद से छात्रों की ज़्यादा अच्छी समझ बनती है (Johnson, Johnson and Tjosvold 2014)। जब वे किसी भी विषय को अलग-अलग नज़रिए से देखते हैं, उन्हें वह ज़्यादा अच्छे से समझ आता है। उन्हें यह भी समझ आता है कि हर मुद्दे के कई पक्ष होते हैं, और उसे कई नज़रियों से देखना चाहिए। वे यह सीखते हैं कि दूसरों को सुनकर ज़्यादा फ़ायदा होता है बजाय अपनी बात पर टिके रहने से। दूसरों को सुनकर हम ज़्यादा अच्छे निर्णय लेते हैं।

रचनात्मक विवाद का प्रयोग करने वालों में नर्सिंग कॉलेज के शिक्षक भी हैं। वे अपने नर्सिंग के छात्रों को सिखाते हैं कि एक दूसरे की सलाह लेनी चाहिए, और अपनी ही धुन में नहीं रहना चाहिए। ऐसा करने से मरीज़ों की जान को ख़तरा हो सकता है। रचनात्मक विवाद पर उन्हें अंक भी दिए जाते हैं। अंकों का आधार होता है– 1) उनके विचार कितने व्यवस्थित हैं; उनके तर्क कितने सुसंगत हैं; क्या वे तार्किक अनुमान का प्रयोग कर रहे हैं या अँधेरे में लठ घुमा रहे हैं; 2) उनका मेडिकल ज्ञान कितना है; और 3) सामूहिक सीख, उन्होंने दूसरों की राय कितनी ली है; दूसरों से कितना सीखकर अपनी समझ को विकसित किया है (Bull 2007)।

आज हमें यह प्रतीत हो रहा है कि पुरानी आदतों में से कुछ बातों को बदलना ही हमारे लिए ज़्यादा अच्छा है। अब हम नई संस्कृति बनाने की कोशिश करें। हिंसा और शोषण की संस्कृति हमारे आज के समाज के लिए, जिसमें इतनी विविधता और इतने रंग हैं, सही नहीं है। हमारे आज के दौर के लिए संवाद की संस्कृति ही ज़्यादा सही है। यह हमारा, शिक्षकों और शिक्षाविदों का काम है कि हम इसे समझें, और इसे सिखाने के तरीक़े ईजाद करें। इसी को संस्कृति बनाना कहते हैं।

रचनात्मक विवाद और जनतांत्रिक मूल्य

जनतंत्र का आधार होता है दूसरों की सुनना, उनसे चर्चा करना, अपना तर्क सामने रखना, और मिलकर अच्छे निष्कर्ष पर पहुँचना। कुछ लोग सोचते हैं कि सिर्फ़ वोट डालना ही जनतंत्र की पहचान होती है। वे कहते हैं कि जनतांत्रिक होने का मतलब होता है कि हमें वोट डालने की आज़ादी है, और हम अपने प्रतिनिधि ख़ुद चुनते हैं। इस समझ के अनुसार जनतंत्र में हमारे

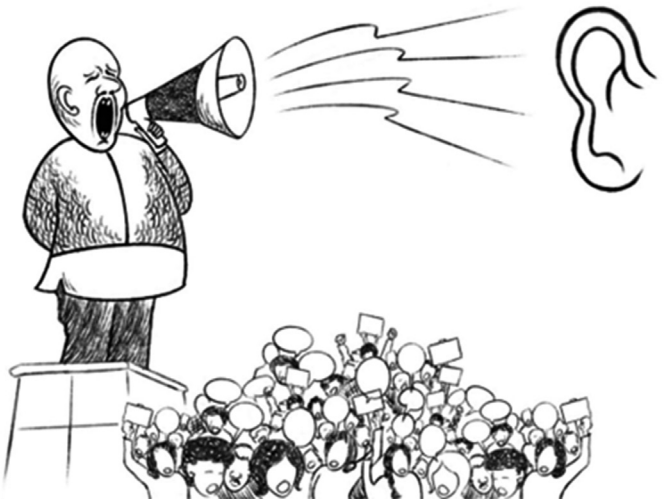

चित्र : अबीरा बंदोपाध्याय

प्रतिनिधि हमारा मत प्रस्तुत करते हैं, और जिस मत के ज़्यादा प्रतिनिधि हैं उसे ही विजयी माना जाता है। मगर क्या सही मायने में जनतंत्र यही है? इसमें तर्क और संवाद कहाँ है? कुछ और राजनीति शास्त्रियों का मानना है कि जनतंत्र में यह सही है कि लोगों को अपना मत रखने की आज़ादी होती है, मगर यह तभी सार्थक है जब दूसरे उनको सुन रहे हों। और जब दूसरे बोलें तो हम उनको सुन रहे हों। अगर सभी सिर्फ़ अपनी-अपनी बोल रहे हैं, और कोई दूसरे की सुन नहीं रहा तो बोलने का कोई अर्थ नहीं है।

जनतंत्र में ज़रूरी है कि विचार-विमर्श हो। जनतंत्र वह व्यवस्था है जिसमें अलग-अलग नज़रिए मिलकर एक ऐसी व्यापक समझ बनाएँ जो ज़्यादा अच्छी और समृद्ध हो। अगर हम सिर्फ़ चिल्लाते रहें, और किसी की न सुनें तो हम जिस निर्णय पर पहुँचेंगे वह सबके लिए अच्छा कैसे हो सकता है। एक जनतंत्र, जिसमें हम विचार-विमर्श करते हैं, ज़्यादा अच्छे निर्णय प्रदान करता है। एक विचार-विमर्श वाला जनतंत्र (deliberative democracy) किसी भी दूसरी राजनीतिक प्रणाली से ज़्यादा अच्छा होता है। उसका सबसे ज़्यादा फ़ायदा वहाँ होता है जहाँ सामाजिक ग़ैर-बराबरी अधिक हो। ऐसे समाज में सिर्फ़ जो ज़्यादा ज़ोर से चिल्लाते हैं, वही निर्णय लेते हैं। जिन लोगों के पास ज़्यादा धन और ज़्यादा ताक़त होती है, उन्हें लगता है कि बस हम ही सही बोलते हैं, और उनके पास कम धन, कम ताक़त और कम ओहदे के लोगों को सुनने की कोई इच्छा नहीं होती। जब हम एक ऐसी संस्कृति बनाते हैं जहाँ एक दूसरे को सुनने को प्रोत्साहन मिलता है, और इस बात को बढ़ावा देते हैं कि हम मिलकर सबके भले का हल ढूँढ़ें तो कमज़ोर और ताक़तवर दोनों का फ़ायदा होगा।

संस्कृति बनाना

हम में से कईयों को लगेगा कि दूसरों को सुनना, उनसे संवाद बनाना, और साथ में मिलकर सोचना, यह हमारी ज़िन्दगीभर की आदतों के विपरीत जाता है। ऐसा लगेगा कि यही ज़्यादा आसान है कि हम बस चिल्लाते ही रहें कि हमें क्या चाहिए। लेकिन हम मानव अपनी आदतों को लगातार बदलते भी रहते हैं। जब हमें यह समझ में आता है कि हमारे लिए क्या ज़्यादा लाभकारी है, हम अपनी आदतें धीरे-धीरे बदल लेते हैं। यही हमारे लिए लाभकारी है कि हम मूल्यों पर मन्थन करें, औरों की राय सुनें, और मिलकर सोचें। जो लोग ज़्यादा ताक़तवर हैं, हो सकता है वे शुरू

में इससे हिचकिचाएँ। उन्हें लग सकता है कि सिर्फ़ अपने नज़रिए से सोचते रहना ज़्यादा सुविधाजनक है। मगर थोड़ा-सा भी मन्थन यह दिखा देगा कि सिर्फ़ सुविधा के आधार पर निर्णय लेने से कहीं ज़्यादा अच्छा है कि हम सही-ग़लत, तर्क और प्रमाण के आकलन पर निर्णय लें। इस तरह की सोच जब हमारी आदत बन जाती है, वह हमारी संस्कृति बन जाती है।

हम लगातार अपनी संस्कृति को आगे बढ़ाते हैं, और उसे नए सिरे से बुनते भी हैं। जब इंसानों ने पहली बार शिकार-बटोरने की जगह खेती करना शुरू किया तब भी उन्हें एक नई संस्कृति बनानी पड़ी थी। उन्हें एक जगह टिक कर रहना सीखना पड़ा, घर और शहर बनाने सीखने पड़े, और एक दूसरे की सम्पत्ति का आदर करना सीखना पड़ा। जब इस संस्कृति की आदत पड़ गई तब यह भी आसान और सुविधाजनक ही लगनी शुरू हो गई। आज हमें यह प्रतीत हो रहा है कि पुरानी आदतों में से कुछ बातों को बदलना ही हमारे लिए ज़्यादा अच्छा है। अब हम नई संस्कृति बनाने की कोशिश करे। हिंसा और शोषण की संस्कृति हमारे आज के समाज के लिए, जिसमें इतनी विविधता और इतने रंग हैं, सही नहीं है। हमारे आज के दौर के लिए संवाद की संस्कृति ही ज़्यादा सही है। यह हमारा, शिक्षकों और शिक्षाविदों का काम है कि हम इसे समझें, और इसे सिखाने के तरीक़े ईजाद करें। इसी को संस्कृति बनाना कहते हैं।

सन्दर्भ

1. Bull, Margaret J. 'Using Structured Academic Controversy with Nursing Students.' *Nurse Educator* 32, no. 5 (2007): 218–22.
2. Johnson, David W., Roger T. Johnson, and Dean Tjosvold. 'Constructive Controversy: The Value of Intellectual Opposition.' *In The Handbook of Conflict Resolution: Theory and Practice*, edited by Peter T. Coleman, Morton Deutsch, and Eric C. Marcus, 3rd ed. San Francisco: Jossey-Bass, 2014.

अमन मदान ने मानवशास्त्र और समाज शास्त्र का अध्ययन किया है। पिछले तीन दशकों से शिक्षा और समाज के मुद्दों पर अध्यापन एवं शोध के क्षेत्र में संलग्न हैं। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य कर रहे हैं।

सम्पर्क : amman.madan@apu.edu.in